॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

मानस-मुक्ता

श्रीराम-सेवा-आश्रम, वृन्दावन में श्रीरामचरितमानसके नवाह्न पारायणके पावन अवसरपर वितरित

मार्गशीर्ष कृष्ण ४ से ११, २०७२ दिनांक २१ नवम्बरसे ७ दिसम्बर, २०१५

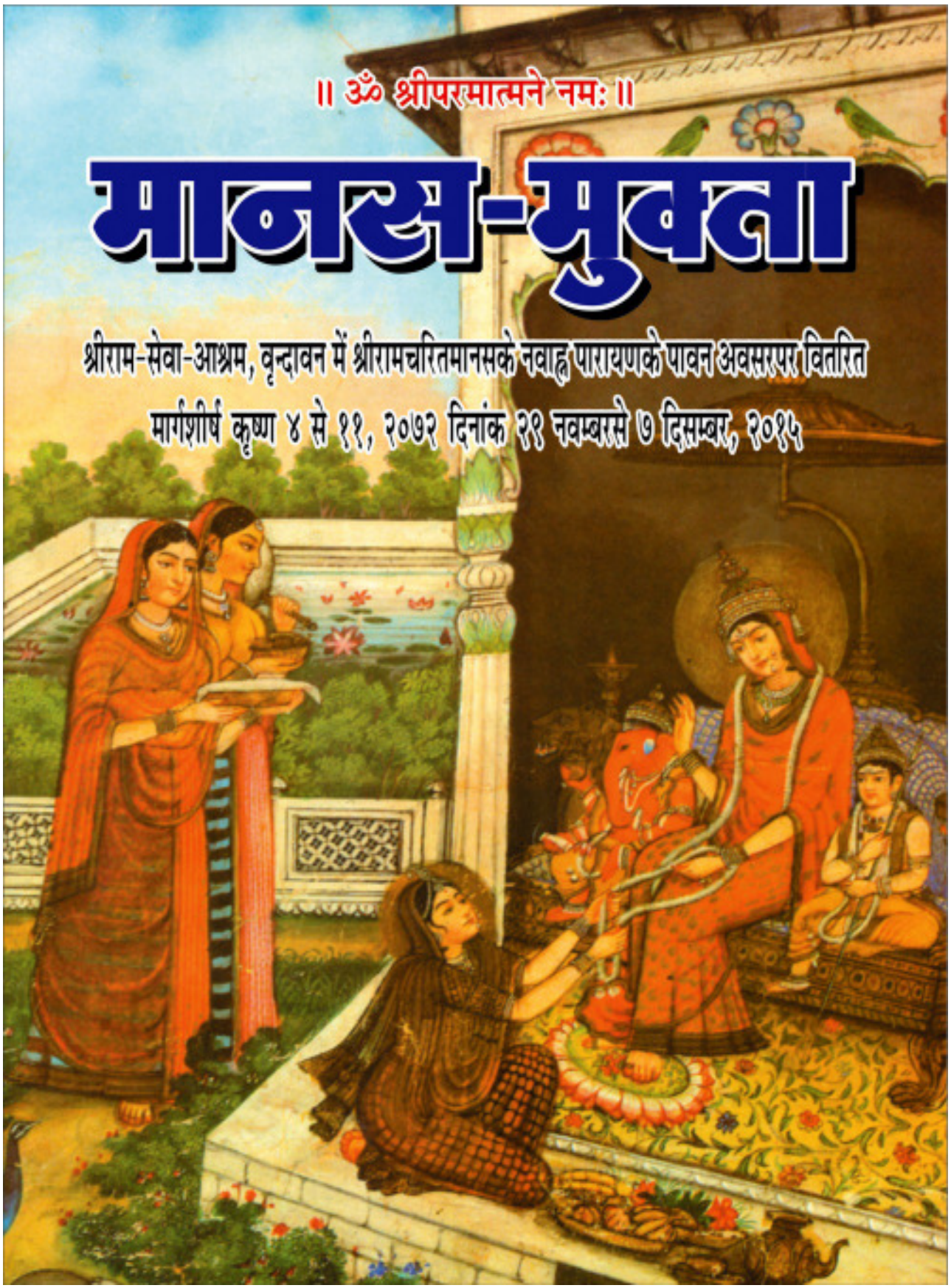

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

मानस-मुक्ता

[परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके वचनोंसे संगृहीत]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

'हे प्रभो! आप ही मेरी माता हो, आप ही पिता हो, आप ही बन्धु हो, आप ही सखा हो, आप ही विद्या हो, आप ही धन हो। हे देवदेव! मेरे सब कुछ आप ही हो।'

संकलन तथा सम्पादन—
राजेन्द्र कुमार धवन

गीता प्रकाशन, गोरखपुर

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

विषय-सूची

१. मानस-महिमा १
२. रामायण-सम्बन्धी विविध बातें ४

परिशिष्ट

१. कन्याके शीघ्र विवाहके लिये १०
२. मानस-सिद्ध-मन्त्र १२
३. मूल रामायण (मूल पाठ) २२
४. श्रीरामराज्याभिषेक (मूल पाठ) २५

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

मानस-मुक्ता

मानस-महिमा

[परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके वचनोंसे संगृहीत]

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराज सन्तोंमें भी विशेष सन्त, महात्माओंमें भी विशेष महात्मा हुए हैं। उनकी वाणी जीवोंका विशेष हित करनेवाली है। उनकी वाणीमें भगवान्‌के चरित्रका वर्णन विचित्र ढंगसे है। वे कविकी दृष्टिसे भी श्रेष्ठ हैं, पर वास्तवमें उनकी महिमा सन्तकी दृष्टिसे है, कविकी दृष्टिसे नहीं। उनको कवि कहना उनका अपमान करना है। वे एक स्मृतिकार ऋषिकी तरह थे। उनकी वाणीका श्रुति-स्मृतिकी वाणीकी तरह असर होता है। जैसे श्रुति-स्मृतिका प्रमाण माना जाता है, ऐसे ही उनकी श्रीरामचरितमानसका भी प्रमाण माना जाता है। कविताकी दृष्टिसे भी देखें तो उनकी कविता बड़ी विचित्र, अलौकिक है। एक केशव कवि हुए हैं, जिन्होंने 'रामचन्द्रिका' नामक काव्यकी रचना की। उनसे किसीने पूछा कि कविता किसकी श्रेष्ठ है, आपकी या गोस्वामीजीकी? उन्होंने उत्तर दिया कि कविता मेरी श्रेष्ठ है। फिर पूछा कि गोस्वामीजीकी कविता? वे बोले कि वह कविता नहीं है, वह तो वेदकी ऋचाएँ हैं!

गोस्वामीजी महाराजकी वाणी हिन्दीमें होते हुए भी संस्कृतसे कम नहीं है। पहले उन्होंने रामायणको संस्कृतमें लिखना आरम्भ किया। परन्तु वे दिनमें जो लिखते थे, वह रातको गायब हो जाता था। आगे भविष्यमें संस्कृत जाननेवाले बहुत कम रह जायँगे, इस कारण एक दिन भगवान् शंकरजीने उनको आज्ञा दी कि तुम हिन्दीमें रामायण लिखो, जिससे सब लोगोंको विशेषतासे लाभ हो। इसलिये गोस्वामीजी महाराज लिखते हैं—

कबि न होउँ नहिं बचन प्रबीनू। सकल कला सब बिद्या हीनू॥

(मानस, बाल० ९। ४)

कबित बिबेक एक नहिं मोरें। सत्य कहेउँ लिखि कागद कोरें॥
कबि न होउँ नहिं चतुर कहावउँ। मति अनुरूप राम गुन गावउँ॥

(मानस, बाल० १२। ५)

संभु प्रसाद सुमति हियँ हुलसी। रामचरितमानस कबि तुलसी॥

(मानस, बाल० ३६। १)

अर्थात् मैं कवि होना नहीं चाहता था, पर भगवान् शंकरजीने आज्ञा दे दी तो क्या करूँ! भगवान् शंकरजीकी कृपासे मेरेको सद्‌बुद्धि मिली, जिससे मैं श्रीरामचरितमानसका कवि हो गया! तात्पर्य कि गोस्वामीजी महाराजने श्रीरामरितमानसकी रचना इसलिये नहीं की कि मैं कविके रूपमें प्रसिद्ध हो जाऊँ।

सन्तोंका यह स्वभाव होता है कि उनको अपनेमें गुण तो कोई दीखता नहीं और दोष उनमें कोई रहता नहीं! इसलिये श्रीरामचरितमानसके आरम्भमें गोस्वामीजी लिखते हैं कि इसको मैंने अपने अन्तःकरणके सुखके लिये लिखा है—'**स्वान्तःसुखाय**'। तात्पर्य है कि मैं अपनी विद्वत्ता, अपना कवित्व प्रकट करनेके लिये रामायण नहीं लिख रहा हूँ, प्रत्युत अपने सुख, अपने सन्तोषके लिये रामायण

लिख रहा हूँ। गोस्वामीजीने '**स्वान्तःसुखाय**' रामायण लिखी, पर उससे असंख्य लोगोंका उपकार (लौकिक तथा पारलौकिक लाभ) हुआ है, हो रहा है और आगे होता रहेगा! उनकी श्रीरामचरितमानसके पठन-पाठनसे कितने लोगोंको शान्ति मिलती है! कितने लोगोंकी जीविका चलती है! तात्पर्य है कि सन्तोंके द्वारा दुनियाका जितना उपकार होता है, उतना उपकार कोई करोड़ों-अरबों रुपये लगाकर भी नहीं कर सकता।

सन्तोंकी वाणीमें जो ताकत होती है, वह ताकत साधारण कविकी कवितामें नहीं होती। अनेक कवियोंने अपनी कवितामें रामायण लिखी है। एक समय 'राधेश्याम रामायण' का खूब प्रचार हुआ था और वह घर-घरमें गायी जाती थी। उसकी कविता और तर्ज बडे सुन्दर थे। राधेश्यामजी मेरेसे मिले भी थे। बड़ी सुन्दर बातें कहते थे। उन्होंने बहुत रुपये कमाये। पर आज उनकी रामायणका प्रचार देखनेको नहीं मिलता। गोस्वामीजीने संवत् १६३१ में श्रीरामचरितमानस लिखी थी, पर आज भी उसका प्रचार कम नहीं हुआ, प्रत्युत बढ़ता ही चला जा रहा है! यह सन्तोंकी वाणीका ही प्रभाव है। एक कविता बनाता है और एकके हृदयसे भगवत्प्रेमसे भरे हुए भाव निकलते हैं, दोनोंमें बड़ा फर्क होता है।

गोस्वामीजीकी वाणीमें बड़ा असर है; क्योंकि वे अनुभव किये हुए थे। अनुभवी सन्तोंकी वाणीमें बड़ी ताकत होती है। उनकी वाणी गोली भरी हुई बन्दूककी तरह होती है, जो आवाजके साथ-साथ चोट भी करती है। परन्तु जिसने अनुभव नहीं किया है, उसकी वाणी बिना गोलीकी बन्दूककी तरह होती है, जो केवल आवाज करके शान्त हो जाती है।

गोस्वामीजीकी वाणीके अक्षरोंमें, शब्दोंमें विलक्षणता भरी हुई है। वह विलक्षणता भगवान्‌के प्रेमकी है। उनकी वाणीका गरीब-से-गरीब और धनी-से-धनी व्यक्ति, राजा-महाराजाओंके भी हृदयमें आदर है। संस्कृतके अच्छे-अच्छे विद्वान् भी उनकी श्रीरामचरितमानसका लोहा मानते हैं। लोगोंकी सत्संगमें, व्याख्यानमें उतनी रुचि नहीं होती, जितनी रामायणके पाठमें होती है—ऐसा मैंने देखा है। रामायण-पाठकी ध्वनिमें भी विलक्षणता है। अनपढ़ व्यक्ति भी केवल रामायणकी ध्वनि सुननेसे आकृष्ट हो जाते हैं। कारण कि इसमें सन्तकी वाणी और भगवान्‌का चरित्र है।

श्रीरामचरितमानसकी रचना मेरेको बहुत विलक्षण लगती है। इसके शब्दोंमें बड़ी विलक्षणता है। यह 'राम'-नामसे ओतप्रोत है। इसकी हरेक चौपाईमें 'र' और 'म' अक्षर मिलेंगे। इन दो अक्षरोंके बिना बहुत कम चौपाई मिलेगी; जैसे—कलियुगके वर्णनमें *'झूठइ लेना झूठइ देना। झूठइ भोजन झूठ चबेना॥'* (उत्तर० ३९। ४)—इस चौपाईमें 'र' और 'म' नहीं हैं।

मनुष्योंमें भी लघुता बड़ी मीठी लगती है, और काव्यमें भी। इसलिये गोस्वामीजीकी रचनामें भी लघु अक्षर बहुत हैं।

गोस्वामीजीकी वाणीमें यह विलक्षणता है कि जैसा व्यक्ति हो, उसके मुखसे वैसी ही वाणी (भाषा) कहलवाते हैं; बच्चोंके मुखसे बच्चों-जैसी, स्त्रियोंके मुखसे स्त्रियों-जैसी, बूढ़ोंके मुखसे बूढ़ों-जैसी! जैसे, निषादराज कहते हैं—*'मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब साची कहौं'* (अयोध्या० १०० छं०)। गोस्वामीजीकी वाणीमें जो विलक्षणता आयी है, वह स्वाभाविक आयी है, उन्होंने जान-बूझकर नहीं लिखी।

श्रीरामचरितमानस इतना विलक्षण ग्रन्थ है कि साधारण आदमीसे लेकर जीवन्मुक्त सन्त-महात्मातक इसका आदर करते हैं। विद्वानोंसे लेकर अनपढ़ोंतक, राजाओंसे लेकर गरीबोंतकके पास श्रीरामचरितमानस

मिल जायगी। जो मुक्त हो गया है, उसको भी श्रीरामचरितमानस अच्छी लगती है। जो अपना कल्याण चाहता है, उसको भी श्रीरामचरितमानस अच्छी लगती है। जो भोगोंमें लगा हुआ है, उसको भी श्रीरामचरितमानस अच्छी लगती है। श्रीरामचरितमानसमें बड़ी विलक्षणता है, बड़ी चिचित्रता है, बड़ा आकर्षण है, बड़ी प्रियता है! इसका पाठ करनेसे विलक्षण शान्ति मिलती है और अन्त:करणमें निर्मलता, पवित्रता आती है, पारमार्थिक रुचि बढ़ती है, दैवी गुण आते हैं। इसमें बड़ी दैविक शक्ति भरी हुई है; पाप-ताप-सन्तापको दूर करनेकी शक्ति भरी हुई है; भूत-प्रेत-पिशाचको दूर करनेकी शक्ति भरी हुई है। श्रीरामचरितमानस कलियुगका कल्पवृक्ष है। इसके पाठसे सभी लौकिक और पारमार्थिक कामनाएँ पूरी हो जाती हैं।

श्रीरामचरितमानस एक प्रसादिक ग्रन्थ है। इसका पाठ करनेसे बुद्धि विकसित होती है। जिसको केवल वर्णमालाका ज्ञान हो, वह भी यदि अंगुली रखकर श्रीरामचरितमानसके एक-दो पाठ कर ले तो उसको पढ़ना आ जायगा। वह अन्य पुस्तकें भी पढ़ना शुरू कर देगा। मैंने ऐसी माताओंको देखा है, जो पढ़ी-लिखी नहीं हैं, पर पाठके समय रामायणपर अंगुली रखकर पढ़नेकी कोशिश करते-करते उनको पढ़ना आ गया!

श्रीरामचरितमानसका नवाह्न पाठ करनेवाला विद्यार्थी कभी फेल नहीं होता। पाठ करनेमें समय तो खर्च होता है, पर इससे एक विलक्षण ताकत आती है। हमारे साथ पढ़नेवाला एक विद्यार्थी रोजाना श्रीरामचरितमानसका पाठ किया करता था और नौ दिनोंमें पाठ पूरा कर लिया करता था। परीक्षाके दिनोंमें भी उसने पाठ नहीं छोड़ा। परिणाममें वह अच्छे नम्बरोंसे पास हुआ और आगे चलकर अच्छा विद्वान् हो गया!

श्रीरामचरितमानसके पाठसे विचित्रता आती है और भगवान्‌के प्रति हृदयमें श्रद्धा-भक्ति पैदा हो जाती है। आप पाठ करके देखो। जैसे भोजन करनेसे जो आनन्द आता है, वह भोजनको देखनेसे नहीं आता। लड्डू खानेवाला ही लड्डूको जानता है। ऐसे ही नामजप करनेवाला ही नामको जानता है, गीताका पाठ करनेवाला ही गीताको जानता है, श्रीरामचरितमानसका पाठ करनेवाला ही श्रीरामचरितमानसको जानता है कि उसमें कितनी विचित्रिता, अलौकिकता भरी हुई है!

स्वर्गादि लोकोंमें भी श्रीरामचरितमानसकी कथा होती है, ऐसा सन्तोंके चरित्रमें सुननेमें आया है।

गोस्वामीजीका अनुभव भी बड़ा विचित्र है! उन्होंने साफ लिखा है—***'पायो परम बिश्रामु'*** (मानस, उत्तर० १३० छं०)। यह सन्तोंके अनुभवकी ऊँची-से-ऊँची बात है! उनकी वाणीमें वेदान्तका भी वर्णन आता है और भक्तिका भी। पर भक्तिके विषयमें उन्होंने बड़े विचित्र ढंगसे बात कही है! विचार करनेसे मालूम होता है कि वे कितने गहरे उतरे हुए हैं! उन्होंने कहा है—

प्रेम भगति जल बिनु रघुराई। अभिअंतर मल कबहुँ न जाई॥

(मानस, उत्तर० ४९। ३)

'प्रेम-भक्तिरूपी जलके बिना अन्त:करणका मल कभी नहीं जाता।'

देखनेमें यह सामान्य चौपाई दीखती है, पर इसमें बड़ी गहरी बात बतायी है। तत्त्वज्ञान होनेपर भी भीतरमें एक सूक्ष्म अहम् रहता है। वह अहम् मुक्तिमें बाधक नहीं होता, पर वह द्वैत-अद्वैत आदि मतभेद करनेवाला होता है। परन्तु प्रेमकी प्राप्ति होनेपर वह सूक्ष्म अहम् भी मिट जाता है।

नि:स्वार्थभावसे सबका हित करनेवाले दो ही हैं—भगवान् और उनके प्यारे भक्त—

सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥

स्वारथ मीत सकल जग माहीं। सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं॥
हेतु रहित जग जुग उपकारी। तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी॥

× × ×

संतन मिलि निरनै कियो मथि पुरान इतिहास।
भजिबे को दोई सुघर, कै हरि कै हरिदास॥

इन दोनोंके ही साक्षात् वचनामृतरूप ये दो विलक्षण ग्रन्थ हैं—भगवान्‌के श्रीमुखकी वाणी गीता और भक्तराज तुलसीकी वाणी रामायण (श्रीरामचरितमानस)। भाषाएँ अनेक हैं, पर उनमें सर्वश्रेष्ठ है—देवभाषा संस्कृत और दूसरी है राष्ट्रभाषा हिन्दी। गीता संस्कृतमें है और रामायण हिन्दीमें। हमारे अवतार भी दो ही मुख्य माने जाते हैं—एक श्रीराम और दूसरे श्रीकृष्ण। उक्त दोनों ग्रन्थ भी इन दोनोंकी महिमा हैं। उपदेश देनेके तरीके भी दो ही हैं—एक मुखसे कहकर और एक आचरण करके। गीतामें भगवान् श्रीकृष्णने कहकर उपदेश दिया और भगवान् श्रीरामने उसीको रामायणमें करके दिखलाया। काव्य भी दो ही तरहके होते हैं—एक दृश्य और दूसरा श्रव्य। रामायण दृश्य और गीता श्रव्य है।

श्रीरामचरितमानस और श्रीमद्भगवद्गीता—इन दो ग्रन्थोंका मेरेपर बहुत विशेष असर है। ये दोनों ही प्रासादिक ग्रन्थ हैं। जैसे सन्त किसीपर कृपा करते हैं, ऐसे ही ये ग्रन्थ भी कृपा करते हैं। इनका पाठ करनेसे बुद्धि शुद्ध होती है। बुद्धि शुद्ध होनेसे भीतरसे शुद्ध विचार प्रकट होते हैं, विचित्र-विचित्र भाव पैदा होते हैं।

रामायण-सम्बन्धी विविध बातें

गोस्वामीजीने रामायण लिखनी शुरू की तो सबसे पहले भरतजीका चरित्र (अयोध्याकाण्ड) लिखा। इसके बाद बालकाण्ड लिखना शुरू किया। इसलिये अयोध्याकाण्ड और बालकाण्ड—दोनोंके आरम्भमें गुरु-वन्दना की गयी है, दूसरे काण्डोंके आरम्भमें नहीं। कारण कि पहले गुरु-वन्दना अयोध्याकाण्डमें की और उसके बाद ग्रन्थका आरम्भ किया तो बालकाण्डके आरम्भमें गुरु-वन्दना की, फिर लिखते चले गये। इस प्रकार गोस्वामीजीने पहले भक्तका चरित्र लिखा, फिर भगवान्‌का चरित्र लिखा।

*** *** ***

श्रीकृष्णकी तरह रामजी भी सिरपर मोरपंख धारण करते थे—***'मोरपंख सिर सोहत नीके'*** (बाल० २३३। १)।

*** *** ***

भक्तिमें वैराग्य आवश्यक है; क्योंकि राग रहनेसे भक्त वियोग नहीं सह सकता। दशरथजीका भगवान् राममें पुत्रविषयक राग था, इसलिये वे रामजीका वियोग नहीं सह सके और उनकी मृत्यु हो गयी—***'तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम'*** (अयोध्या० १५५)। अगर दशरथजीका भगवान् राममें प्रेम ही होता, साथमें पुत्रमोह (जड़ता) न होता तो वे मरते नहीं। जड़ता साथमें रहनेसे ही प्रेममें मृत्यु होती है।

*** *** ***

एक बार वृन्दावनके सन्तने मेरेसे कहा कि नन्दबाबाका लालाके प्रति प्रेम दशरथजीसे भी अधिक

था। कारण कि जब नन्दबाबा लालाको मथुरा छोड़कर वापिस आये, तब यशोदाने कहा कि वापिस कैसे आ गये? लालाके बिना आपने अपने प्राण कैसे रख लिये? तो नन्दबाबाने कहा कि यदि मैं प्राण छोड़ देता तो जब भी लाला यहाँ आता, मुझे न पाकर दु:खी होता। अत: उसको दु:ख न हो, इस कारण मैंने प्राण रख लिये। यह सुनकर मैंने कहा कि दशरथजीका प्रेम भी नन्दबाबासे कम नहीं था। उन्होंने रामजीकी सौगन्ध खाकर कैकेयीको वरदान दिया था। अत: सौगन्ध तोड़नेसे कहीं रामजीका अनिष्ट न हो जाय, ऐसा सोचकर दशरथजीने प्राण छोड़ दिये, पर वचन नहीं छोड़ा! अत: नन्दबाबा और दशरथजी—दोनोंका प्रेम समान था। दोनोंका एक ही भाव था कि लालाका अनिष्ट न हो जाय।

*** *** ***

स्वायम्भुव मनुने भगवान्‌से दो वरदान माँगे थे—जैसे मणिके बिना साँप नहीं रह सकता, वैसे ही मेरा जीवन आपके अधीन रहे, और जैसे जलके बिना मछली नहीं रह सकती, वैसे ही मेरा जीवन आपके अधीन रहे अर्थात् आपके बिना न रह सके—***'मनि बिनु फनि जिमि जल बिनु मीना। मम जीवन तिमि तुम्हहि अधीना'*** (बाल० १५१। ३)। इसलिये दशरथजीका दो बार रामजीसे वियोग हुआ। पहली बार तब वियोग हुआ, जब विश्वामित्रजी रामजीको यज्ञकी रक्षाके लिये ले गये, और दूसरी बार तब वियोग हुआ, जब रामजीको वनवास हुआ। पहली बार वियोग हुआ तो मणिके बिना साँपकी जैसी दशा होती है, वैसी दशा दशरथजीकी हुई। दूसरी बार वियोग हुआ तो जलके बिना मछलीकी जैसी दशा होती है, वैसी दशा दशरथजीकी हुई और उन्होंने शरीर छोड़ दिया। जलके बिना मछली मर जाती है।

*** *** ***

गोस्वामीजी महाराज अपने मनसे रामजीके साथ रहते हैं, इसलिये **'इहाँ'** लिखते है—***'इहाँ प्रात जागे रघुराई'*** (लंका० १७। १) और रावणके साथ नहीं रहते, इसलिये **'उहाँ'** लिखते हैं—***'उहाँ सकोपि दसानन.....'*** (लंका० ३२ ख) आदि। परन्तु जहाँ भगवान् और भक्त—दोनोंकी बात आती है, वहाँ गोस्वामीजी भगवान्‌को छोड़कर भक्तके साथ रहते हैं; जैसे—भरतजीका वर्णन करते समय वे भरतजीके लिये ***'इहाँ'*** लिखते हैं—***'इहाँ भरतु सब सहित सहाए'*** (अयोध्या० २३३। २) और रामजीके लिये ***'उहाँ'*** लिखते हैं—***'उहाँ रामु रजनी अवसेषा'*** (अयोध्या० २२६। २)।

*** *** ***

निषादराज और केवट—दोनों अलग-अलग थे। निषादराज राजा थे और केवट प्रजा।

*** *** ***

विवाहके समय रामजीकी सासने चारों दामादों (राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न)-को देनेके लिये चार अत्यन्त सुन्दर अँगूठियाँ बनवायीं थीं। रामजीने अपनी वह अँगूठी सीताजीको मुँह दिखायीके समय दे दी। वनवासके समय सीताजी सब गहनोंके साथ गयी थीं; अत: वह अँगूठी भी उनकी अँगुलीमें थी। केवट-प्रसंगमें सीताजीने वही अँगूठी केवटको देनेके लिये रामजीको दे दी। केवटने वह अँगूठी नहीं ली। अत: वह अँगूठी रामजीके पास ही रह गयी। वही अँगूठी रामजीने हनुमान्‌जीको सीताजीकी खोजमें जाते समय दी।

*** *** ***

'प्रेम' में संग मुख्य है और 'श्रद्धा' में आज्ञापालन मुख्य है। 'प्रेम' की मुख्यता होनेपर भक्त

वियोग नहीं सह सकता और 'श्रद्धा' की मुख्यता होनेपर भक्त वचन नहीं टाल सकता। लक्ष्मणजीमें श्रद्धा थी, पर 'प्रेम' की मुख्यता थी। भरतजीमें प्रेम था, पर 'श्रद्धा' की मुख्यता थी।

*** *** ***

रावणने समझ लिया था कि जिसने खर-दूषणका वध कर दिया, वह कोई मनुष्य नहीं हो सकता, प्रत्युत भगवान् ही हो सकता है। पर इसमें उसको कुछ संशय था। इसलिये वह सीताजीको चुराकर ले गया, अन्यथा जैसे वह अन्य स्त्रियोंको युद्धमें जीतकर ले गया, ऐसे ही सीताजीको भी युद्ध करके ले जाता।

*** *** ***

भगवान्‌की परीक्षा करेंगे तो भगवान् फेल हो जायँगे! कारण कि भगवान्‌को कोई सर्टिफिकेट थोड़े ही लेना है! रावणने स्वर्णमृग भेजकर परीक्षा लेनी चाही तो भगवान् फेल हो गये! अतः भगवान्‌पर भरोसा, विश्वास करो, पर परीक्षा मत करो।

*** *** ***

रामजीके वियोगमें सीताजी जितनी व्याकुल हो सकती थीं, सीताजीके वियोगमें रामजी भी उतने ही व्याकुल होते हैं। ऐसे ही रामजीके वियोगमें लक्ष्मणजी जितने व्याकुल हो सकते थे, लक्ष्मणजीके वियोगमें रामजी भी उतने ही व्याकुल होते हैं।

*** *** ***

रामजीने सीताको छुड़ानेके लिये भरतजीसे सहायता नहीं माँगी। सुग्रीवसे भी मुफ्तमें सहायता नहीं ली। उसका उपकार चार गुना किया—***'पावा राज कोस पुर नारी'*** (किष्किन्धा० १८। २), तब एक गुना लिया।

*** *** ***

भगवान्‌के प्रति जिसका जैसा भाव होता है, उसके द्वारा स्वतः वैसा ही ध्यान होता है। जिसका माधुर्यभाव होता है, उसको स्वतः भगवान्‌के मुखका ध्यान होता है। जिसका दास्यभाव होता है, उसको स्वतः भगवान्‌के चरणोंका ध्यान होता है। विभीषण अपनी रक्षा चाहता था, इसलिये उसको स्वतः भगवान्‌की भुजाओंका ध्यान होता है।

*** *** ***

वानरको न भोजनकी जरूरत है, न मकानकी जरूरत है, न वस्त्रकी जरूरत है, न शस्त्रकी जरूरत है। सेना इतनी बड़ी, पर खर्चा कुछ नहीं! कारण कि वह 'राजा' रामकी सेना नहीं थी, प्रत्युत 'वनवासी' रामकी सेना थी।

*** *** ***

जब रावण रामजीका रूप धारण करता है, तब वह सीताजीका स्पर्श नहीं कर पाता; क्योंकि परस्त्रीके प्रति रामजीकी वैसी ही वृत्ति थी। रामजीका रूप धारण करनेके लिये रावणको उस रूपके साथ तल्लीनता करनी पड़ती थी, जिससे रामजीकी वृत्ति भी उसमें आ जाती थी।

*** *** ***

राक्षसलोग जब पीछे भागते हैं, तब रावण कहता है कि जो भागेगा, उसको मैं मार दूँगा। परन्तु जब वानर पीछे भागते हैं, तब रामजी कहते हैं कि डरो मत, मैं अभी आया! इस प्रकार दोनोंके

वचनोंमें फर्क है!

*** *** ***

शबरी जातिमें जूठन खानेका परहेज नहीं था, इसलिये रामजीने भी शबरीका जूठन ले लिया—**'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्'** (गीता ४। ११) 'जो भक्त जिस प्रकार मेरी शरण लेते हैं, मैं उन्हें उसी प्रकार आश्रय देता हूँ'। शबरीका जूठन खानेकी बात रामायणमें नहीं आती, प्रत्युत सन्तवाणीमें आती है।

*** *** ***

रामायणमें **'लुगाई'** शब्द स्त्रियोंके लिये आया है। परन्तु जहाँ **'लोग लुगाई'** शब्द आये हैं, वहाँ **'लोग'** शब्द पतिके लिये और **'लुगाई'** शब्द पत्नीके लिये समझना चाहिये।

*** *** ***

जो खास अपना होता है, उसको 'वे' कहते हैं। रामायणमें 'वे' के अर्थमें **'सोई'** शब्द आया है।

*** *** ***

वियोगमें प्रेम प्रकट होता है। अगर रामजीको वनवास न होता तो भरतजीका प्रेम प्रकट नहीं होता।

*** *** ***

रावणने बहुमूल्य रत्नोंकी एक माला बनवायी थी। वह माला विभीषणने रामजीको पहना दी। रामजीने वह माला सीताजीको पहना दी। सीताजीने वह माला हनुमान्‌जीको दे दी। पर हनुमान्‌जीने उस मालाको अपने दाँतोंसे तोड़ना शुरू कर दिया; क्योंकि उनकी दृष्टिमें मूल्य रामजीका है, मालाका नहीं। जिसकी देह वज्रकी हो, उसके दाँत कैसे होंगे!

*** *** ***

भाईलोग सब कार्य रामजीको याद करके करें और बहनें सब काम सीताजीको याद करके करें।

*** *** ***

रामराज्यकी सबसे अधिक प्रशंसा होती है; क्योंकि रामजीमें त्याग था। उनमें राज्यकी लालसा नहीं थी।

राजतिलक की गेंद बनाकर, खेलन लगे खिलाड़ी।
इधर राम और उधर भरत, दोनों ने ठोकर मारी॥

फुटबालके खेलमें जो फुटबालको स्वीकार करता है, उसकी हार हो जाती है। राम और भरत—दोनोंने ही राज्यरूपी फुटबालको ठोकर मारी। चौदह वर्षोंतक राज्यरूपी फुटबालपर ठोकर मारी जाती रही, अन्तमें रामजीपर गोल हो गया, भरतजीकी विजय हो गयी!

*** *** ***

भक्तोंके मनमें आता है कि रामावतारके समय हम भी होते तो उनकी लीलाएँ देखते। परन्तु भगवान्‌की लीला देखनेसे मोह होता है और सुननेसे मोहका नाश होता है। भगवान्‌की लीला देखनेसे सतीजी तथा गरुड़जी—दोनोंको मोह हो गया, पर रामजीकी कथा सुननेसे दोनोंका मोह दूर हो गया।

भगवान्‌के दर्शन तो दुर्लभ हैं, पर उनकी कथा सुलभ है और हमें पढ़ने-सुननेको मिल रही है—यह भगवान्‌की हमारेपर कितनी कृपा है! सब कोई उनकी कथाको पढ़ सकते हैं, सुन सकते हैं।

*** *** ***

रामजीकी कथासे जो लाभ है, वह रामजीके संगसे नहीं है। इसलिये हनुमान्‌जीने यही वर माँगा कि जबतक पृथ्वीपर रामकथा रहे, तबतक मैं पृथ्वीपर ही रहूँ—

यावद् रामकथा वीर चरिष्यति महीतले।
तावच्छरीरे वत्स्यन्तु प्राणा मम न संशयः॥

(वाल्मीकि० उत्तर० ४०। १७)

'वीर श्रीराम! इस पृथ्वीपर जबतक रामकथा प्रचलित रहे, तबतक निःसन्देह मेरे प्राण इस शरीरमें ही बसे रहें।'

*** *** ***

अन्य भावोंकी अपेक्षा मित्रताके भावमें यह विलक्षणता है कि मित्रता अपनेसे छोटे, अपने समान तथा अपनेसे बड़े सबसे हो सकती है। भगवान्‌ने सिद्ध (निषाद), साधक (विभीषण) और भोगी (सुग्रीव)—तीनोंको अपना मित्र बनाया। भगवान्‌को निषादने आरम्भमें ही कहा कि हमारे घर पधारो, विभीषणने बादमें कहा कि और सुग्रीवने कहा ही नहीं! तात्पर्य है कि आप कैसे ही क्यों न हों, भगवान्‌के मित्र बन सकते हैं, पर भोगी बनकर मित्रता मत करो, साधक बनकर मित्रता करो।

*** *** ***

गोस्वामी तुलसीदासजीने रामायणमें भगवान् श्रीरामको सबसे बड़ा कहा, पर छोटा किसीको नहीं कहा। कारण कि किसीको बड़ा कहनेमें दोष नहीं है, प्रत्युत छोटा कहनेमें दोष है।

*** *** ***

भगवान्‌में यह विशेषता है कि वे किसीपर शासन नहीं करते, किसीको अपना गुलाम नहीं बनाते, किसीको अपना चेला नहीं बनाते, प्रत्युत हर एकको अपना मित्र बनाते हैं, अपने समान बनाते हैं। जैसे, निषादराज सिद्ध भक्त था, विभीषण साधक था और सुग्रीव विषयी था, पर भगवान् श्रीरामने तीनोंको ही अपना सखा बनाया। यह विशेषता देवताओं आदि किसीमें भी नहीं है। इसलिये वेदोंमें भी भगवान्‌को जीवका सखा बताया गया है—**द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते।** (मुण्डक० ३। १। १; श्वेता० ४। ६)

गीतामें भी भगवान्‌ने अर्जुनको कहा है—'**भक्तोऽसि मे सखा चेति**' (४। ३)। यहाँ भगवान्‌ने 'भक्त' तो अर्जुनकी दृष्टिसे कहा है, पर अपनी दृष्टिसे 'सखा' कहा है। '**ममैवांशो जीवलोके**' (१५। ७)—इन पदोंमें भी भगवान्‌ने '**एव**' पदसे जीवको साक्षात् अपना स्वरूप बताया है। यह मेरा ही अंश है—ऐसा कहनेका तात्पर्य है कि इसमें प्रकृतिका अंश बिलकुल नहीं है।

परिशिष्ट

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

कन्याके शीघ्र विवाहके लिये

(१)

पार्वतीजीके चित्रपर चन्दन-पुष्प चढ़ाकर निम्न मन्त्रकी सात या ग्यारह माला जप करें—

हे गौरि शङ्करार्धाङ्गि यथा त्वं शङ्करप्रिया।
तथा मां कुरु कल्याणि कान्तकान्तां सुदुर्लभाम्॥

फिर श्रीरामचरितमानसमें आये निम्न प्रसंगका श्रद्धा-विश्वासपूर्वक पाठ करें—

चौपाई

जय जय गिरिबरराज किसोरी।
जय महेस मुख चंद चकोरी॥
जय गजबदन षडानन माता।
जगत जननि दामिनि दुति गाता॥
नहिं तव आदि मध्य अवसाना।
अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना॥
भव भव बिभव पराभव कारिनि।
बिस्व बिमोहनि स्वबस बिहारिनि॥

दोहा

पतिदेवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख।
महिमा अमित न सकहिं कहि सहस सारदा सेष॥

चौपाई

सेवत तोहि सुलभ फल चारी।
बरदायनी पुरारि पिआरी॥
देबि पूजि पद कमल तुम्हारे।
सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे॥
मोर मनोरथु जानहु नीकें।
बसहु सदा उर पुर सबही कें॥
कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं।
अस कहि चरन गहे बैदेहीं॥
बिनय प्रेम बस भई भवानी।
खसी माल मूरति मुसुकानी॥
सादर सियँ प्रसादु सिर धरेऊ।
बोली गौरि हरषु हियँ भरेऊ॥
सुनु सिय सत्य असीस हमारी।
पूजिहि मन कामना तुम्हारी॥
नारद बचन सदा सुचि साचा।

सो बरु मिलिहि जाहिं मनु राचा॥

छन्द

मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो॥
एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली॥

सोरठा

जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे॥

(बालकाण्ड २३५। ३ से २३६)

(२)

कोरे कागजपर लाल स्याहीसे सवा लाख राम-नाम लिखें। कागजके एक ही तरफ लिखें। कागजपर लाइनें न हों।

(३)

श्रीरामचरितमानसमें राम-विवाहके प्रसंगमें *'माँडवी श्रुतकीरति उरमिला०'* (बाल० ३२५) छन्दसे पाठ आरम्भ करके वहींपर पाठकी समाप्ति करें।

जबतक विवाह न हो, जबतक कोई एक उपाय करते रहना चाहिये।

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

मानस-सिद्ध-मन्त्र

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस एक प्रासादिक ग्रन्थ है। इस असाधारण ग्रन्थके दोहे-चौपाई मन्त्र-सदृश पवित्र एवं प्रभावकारी हैं तथा आश्रित भक्तको अपेक्षित फल प्रदान करनेमें समर्थ हैं। इस ग्रन्थका पाठ अथवा अनुष्ठान करनेसे अथवा इसके दोहे चौपाइयोंको सिद्ध करके जप करनेसे अनेक सकाम एवं निष्काम साधकोंको अभीष्टकी प्राप्ति हुई है और ऐसे प्रसंग प्रायः 'कल्याण'-में छपते रहे हैं।

दोहे-चौपाइयोंको सिद्ध करनेकी विधि

रातमें दस बजेके बाद अष्टांग-हवनकी सामग्री और एक माला लेकर एकान्तमें बैठ जायँ। अपना मुख काशीकी ओर कर लें। कारण कि काशीमें भगवान् शंकरजीने मानसके दोहे-चौपाइयोंको मन्त्र-शक्ति प्रदान की है, इसलिये काशीकी ओर मुख करके उन्हें साक्षी बनाकर श्रद्धासे जप करना चाहिये। एक बार चौपाई पढ़कर हवन करें और मालाका एक मनका पीछे करें। इस प्रकार १०८ बार मन्त्रोच्चारणके साथ हवन करते जायँ। बस, मन्त्र सिद्ध हो गया। फिर जिस कार्यके लिये आवश्यकता हो, इनका श्रद्धापूर्वक जबतक कार्य सिद्ध न हो, नित्य जप करते रहना चाहिये।

श्रद्धा-विश्वासपूर्वक किसी भी चौपाईका सम्पुट लगाकर श्रीरामचरितमानसका पाठ करनेसे भी कार्यसिद्धि होती है। उपर्युक्त विधिसे मन्त्र सिद्ध कर लेनेपर भी सम्पुट-पाठ कर सकते हैं; इससे विशेष शक्ति आती है।

अष्टांग-हवनकी सामग्री—१) चन्दनका बुरादा, २) तिल, ३) शुद्ध घी, ४) शक्कर, ५) अगर, ६) तगर, ७) कपूर, ८) शुद्ध केशर, ९) नागरमोथा, १०) पंचमेवा, ११) जौ, और १२) चावल।

रक्षारेखा—मन्त्र सिद्ध करनेके लिये या किसी संकटपूर्ण जगहपर रात व्यतीत करनेके लिये अपने चारों ओर रक्षाकी रेखा खींच लेनी चाहिये। लक्ष्मणजीने सीताजीकी कुटीके आसपास जो रक्षारेखा खींची थी, उसी लक्ष्यपर रक्षामन्त्र बनाया गया है। इसे १०८ आहुति द्वारा सिद्ध कर लेना चाहिये—

मामभिरक्षय रघुकुल नायक।
धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥

(लंका० ११५)

जाननेयोग्य आवश्यक बातें

जिस उद्देश्यके लिये जिस चौपाई, दोहे या सोरठेका जप करना बताया गया है, उसको सिद्ध करनेके लिये अष्टांग-हवनकी सामग्रीसे उस चौपाई, दोहे या सोरठेके द्वारा १०८ बार हवन करना चाहिये। यह हवन केवल एक ही दिन करना है। इसके लिये कोई अलग कुण्ड बनानेकी आवश्यकता नहीं है। मामूली मिट्टीकी वेदी बनाकर, उसपर अग्नि रखकर उसमें आहुति दे देनी चाहिये। प्रत्येक आहुतिमें चौपाई आदिके अन्तमें '**स्वाहा**' बोलना चाहिये। यह हवन रातको १० बजेके बाद ही करना चाहिये।

सब चीजें मिलाकर प्रत्येक आहुति लगभग पौन तोले [लगभग ८ ग्राम]-की होनी चाहिये। इस हिसाबसे १०८ आहुतिके लिये एक सेर [लगभग ९३५ ग्राम] सामग्री सब चीजें मिलाकर बना लेनी चाहिये। कोई चीज कम-ज्यादा भी हो तो आपत्ति नहीं। पंचमेवामें पिश्ता, बादाम, किशमिश, अखरोट और काजू ले सकते हैं। इनमेंसे कोई चीज न मिले तो उसके बदलेमें चिलगोजा, मिश्री, छुहारा,

चिरौंजी अथवा नारियलकी गिरी भी मिला सकते हैं। शुद्ध केशर चार आनेभर [३ ग्राम] ही डालनेसे काम चल जायगा। अधिककी आवश्यकता नहीं है।

हवन करते समय माला रखनेकी आवश्यकता १०८ की संख्या गिननेभरके लिये है। इसलिये दाहिने हाथसे आहुति देकर फिर दाहिने हाथसे ही मालाका एक मनका सरका देना चाहिये। फिर माला या तो बायें हाथमें ले लेनी चाहिये या आसनपर रख देनी चाहिये। फिर आहुति देनेके बाद उसे दाहिने हाथमें लेकर मनका सरका देना चाहिये। माला रखनेमें असुविधा हो तो गेहूँ, जौ या चावल आदिके १०८ दाने रखकर उनसे गिनतीकी जा सकती है। बैठनेके लिये आसन ऊनका अथवा कुशका होना चाहिये। सूती कपड़ेका हो तो वह धोया हुआ पवित्र होना चाहिये। कपड़े भी शुद्ध धुले पहनने चाहिये। दोहे-चौपाईका उच्चारण मन-ही-मन या बोलकर भी कर सकते हैं, पर होना चाहिये स्पष्ट और शुद्ध। परिवारके सदस्य मिलकर हवन न करें। जिसको जप करना हो, वही हवन करे।

हवन और जप स्वयं ही करना चाहिये। बीमारी आदिके कारण स्वयं न कर सकें तो घरके किसी दूसरे सदस्यके द्वारा अथवा ब्राह्मणके द्वारा भी कराया जा सकता है। अनुष्ठानके दिन व्रत रखनेकी आवश्यकता नहीं है।

यदि कोई चौपाई या दोहा यदि लंकाकाण्डका हो तो उसे शनिवारको हवन करके सिद्ध करना चाहिये। दूसरे काण्डोंके चौपाई-दोहे किसी भी दिन हवन करके सिद्ध किये जा सकते हैं। 'रक्षारेखा'-की चौपाई भी लंकाकाण्डकी है, पर वह किसी भी दिन हवन करके सिद्ध की जा सकती है।

'रक्षारेखा' मन्त्रको सिद्ध करनेके लिये अलग हवन करना है और जप करनेवाले मन्त्र (चौपाई-दोहे)-के लिये अलग। एक बार हवनके द्वारा मन्त्र सिद्ध कर लेनेके बाद फिर न तो रक्षारेखाके मन्त्रको और न उस जपवाले मन्त्रको ही दुबारा हवन करके सिद्ध करना है। एक बार कर लेनेके बाद वह सदाके लिये हो गया। 'रक्षारेखा'-की चौपाई एक बार बोलकर जहाँ बैठे हों, वहाँ अपने आसनके चारों ओर चौकोर रेखा खींच लेनी चाहिये। रक्षारेखाकी चौपाईको भी ऊपर लिखे अनुसार १०८ आहुति देकर सिद्ध कर लेना चाहिये। पर रक्षा-रेखा न भी खींची जाय तो भी आपत्ति नहीं है।

एक दिन हवन करनेसे मन्त्र सिद्ध हो जायगा। इसके बाद जबतक कार्य सफल न हो, तबतक उस मन्त्र (चौपाई-दोहे)-का प्रतिदिन कम-से-कत १०८ बार प्रात:काल या रात्रिको जब सुविधा हो, जप करते रहना चाहिये। अधिक कर सके तो अधिक अच्छा। कोई चाहे तो नियमके जपके सिवा दिनभर चलते-फिरते भी उस चौपाई या दोहेका जप कर सकते हैं। जितना अधिक हो, उतना ही उत्तम है।

कोई दो कार्योंके लिये दो चौपाइयोंका अनुष्ठान एक साथ करना चाहें तो कर सकते हैं, पर दोनों चौपाइयोंको पहले दो दिनोंमें अलग-अलग हवन करके सिद्ध कर लेना चाहिये।

स्त्रियाँ भी इस अनुष्ठानको कर सकती हैं। परन्तु रजस्वला होनेकी स्थितिमें जप बन्द रखना चाहिये। हवन भी रजस्वला-अवस्थामें नहीं करना चाहिये।

जप करते समय मनमें यह विश्वास अवश्य रखना चाहिये कि भगवान् श्रीसीतारामजीकी अहैतुकी कृपासे मेरा कार्य अवश्य सफल होगा।

१. विपत्ति-नाशके लिये

राजिवनयन धरें धनु सायक।
भगत विपति भंजन सुखदायक॥
(बाल० १८। ५)

२. संकट-नाशके लिये

जौं प्रभु दीनदयालु कहावा।
आरति हरन बेद जसु गावा॥
जपहिं नामु जन आरत भारी।
मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी॥
दीन दयाल बिरिदु संभारी।
हरहु नाथ मम संकट भारी॥
(बाल० ५९। ३; २२। ३; सुन्दर० २७। २)

३. कठिन क्लेश-नाशके लिये

हरन कठिन कलि कलुष कलेसू।
महामोह निसि दलन दिनेसू॥
(अयोध्या० ३२६। ३)

४. विघ्न-नाशके लिये

सकल बिघ्न ब्यापहिं नहिं तेही।
राम सुकृपाँ बिलोकहिं जेही॥
(बाल० ३९। ३)

५. खेद-नाशके लिये

जब तें रामु ब्याहि घर आए।
नित नव मंगल मोद बधाए॥
(अयोध्या० १। १)

६. महामारी, हैजा और मरीके प्रभावसे बचनेके लिये

जय रघुबंस बनज बन भानू।
गहन दनुज कुल दहन कृसानू॥
(बाल० २८५। १)

७. विधि रोगों तथा उपद्रवोंकी शान्तिके लिये

दैहिक दैविक भौतिक तापा।
राम राज नहिं काहुहि ब्यापा॥

(उत्तर० २१। १)

८. मस्तिष्ककी पीड़ा दूर करनेके लिये

हनूमान अंगद रन गाजे।
हाँक सुनत रजनीचर भाजे॥
(लंका० ४७। ३)

९. विष-नाशके लिये

नाम प्रभाउ जान सिव नीको।
कालकूट फलु दीन्ह अमी को॥
(बाल० १९। ४)

१०. अकाल-मृत्यु-निवारणके लिये

नाम पाहरू दिवस निसि ध्यान तुम्हार कपाट।
लोचन निज पद जंत्रित जाहिं प्रान केहिं बाट॥
(सुन्दर० ३०)

११. भूतको भगानेके लिये

प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन।
जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर॥
(बाल० १७)

१२. नजर झाड़नेके लिये

स्याम गौर सुंदर दोउ जोरी।
निरखहिं छबि जननीं तृन तोरी॥
(बाल० १९८। ३)

१३. खोयी हुई वस्तु पुनः प्राप्त करनेके लिये

गई बहोर गरीब नेवाजू।
सरल सबल साहिब रघुराजू॥
(बाल० १३। ४)

१४. जीविका-प्राप्तिके लिये

बिस्व भरन पोषन कर जोई।
ताकर नाम भरत अस होई॥
(बाल० १९७। ४)

१५. दरिद्रता दूर करनेके लिये

अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के।
कामद घन दारिद दवारि के॥
(बाल० ३२। ४)

१६. लक्ष्मी-प्राप्तिके लिये

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं।
जद्यपि ताहि कामना नाहीं।
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ।
धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ॥
(बाल० २९४। १-२)

१७. पुत्र-प्राप्तिके लिये

प्रेम मगन कौसल्या निसि दिन जात न जान।
सुत सनेह बस माता बालचरित कर गान॥
(बाल० २००)

१८. सम्पत्तिकी प्राप्तिके लिये

जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं।
सुख संपति नाना बिधि पावहिं॥
(उत्तर० १५। २)

१९. ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त करनेके लिये

साधक नाम जपहिं लय लाएँ।
होहिं सिद्ध अनिमादिक पाएँ॥
(बाल० २२। २)

२०. सब सुख-प्राप्तिके लिये

सुनहिं बिमुक्त बिरत अरु बिषई।
लहहिं भगति गति संपति नई॥
(उत्तर० १५। ३)

२१. मनोरथ-सिद्धिके लिये

भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥
(किष्किन्धा० ३० क)

२२. कुशल-क्षेमके लिये

भुवन चारिदस भरा उछाहू।
जनकसुता रघुबीर बिआहू॥
(बाल० २९६। २)

२३. मुकदमा जीतनेके लिये

पवन तनय बल पवन समाना।
बुधि बिबेक बिग्यान निधाना॥
(किष्किन्धा० ३०। २)

२४. शत्रुके सामने जाते समय

कर सारंग साजि कटि भाथा।
अरि दल दलन चले रघुनाथा॥
(लंका० ६८। १)

२५. शत्रुको मित्र बनानेके लिये

गरल सुधा रिपु करहिं मिताई।
गोपद सिंधु अनल सितलाई॥
(सुन्दर० ५। १)

२६. शत्रुता-नाशके लिये

बयरु न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप बिषमता खोई॥
(उत्तर० २०। ४)

२७. शास्त्रार्थमें विजय पानेके लिये

तेहिं अवसर सुनि सिवधनु भंगा।
आयउ भृगुकुल कमल पतंगा॥
(बाल० २६८। १)

२८. विवाहके लिये

तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह साज सँवारि कै।
माँडवी श्रुतकीरति उरमिला कुअँरि लईं हँकारि कै॥
(बाल० ३२५। छंद २)

२९. यात्राकी सफलताके लिये

प्रबिसि नगर कीजे सब काजा।

हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥
(सुन्दर० ५। १)

३०. परीक्षामें पास होनेके लिये

जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी।
कबि उर अजिर नचावहिं बानी॥
मोरि सुधारिहि सो सब भाँती।
जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती॥
(बाल० १०५। ३; २८। २)

३१. आकर्षणके लिये

जेहि कें जेहि पर सत्य सनेहू।
सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू॥
(बाल० २५९। ३)

३२. स्नानसे पुण्य-लाभके लिये

सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु साधु समाज प्रयाग॥
(बाल० २)

३३. निन्दाकी निवृत्तिके लिये

रामकृपाँ अवरेब सुधारी।
बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी॥
(अयोध्या० ३१७। २)

३४. विद्या-प्राप्तिके लिये

गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई।
अलप काल बिद्या सब आई॥
(बाल० २०४। २)

३५. उत्सवकी सफलताके लिये

सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं।
तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु॥
(बाल० ३६१)

३६. यज्ञोपवीत धारण करके उसे सुरक्षित रखनेके लिये

जुगुति बेधि पुनि पोहिअहिं रामचरित बर ताग।

पहिरहिं सज्जन बिमल उर सोभा अति अनुराग॥
(बाल० ११)

३७. प्रेम बढ़ानेके लिये

सब नर करहिं परस्पर प्रीती।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुति नीति॥
(उत्तर० २१। १)

३८. कातरकी रक्षाके लिये

मोरें हित हरि सम नहिं कोऊ।
एहि अवसर सहाय सोइ होऊ॥
(बाल० १३२। ३)

३९. भगवत्स्मरण करते हुए आरामसे मरनेके लिये

राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग॥
(किष्किन्धा० १०)

४०. विचार शुद्ध करनेके लिये

ताके जुग पद कमल मनावउँ।
जासु कृपाँ निरमल मति पावउँ॥
(बाल० १८। ४)

४१. संशय-निवृत्तिके लिये

रामकथा सुंदर कर तारी।
संसय बिहग उड़ावनिहारी॥
(बाल० ११४। १)

४२. ईश्वरसे अपराध क्षमा करानेके लिये

अनुचित बहुत कहेउँ अग्याता।
छमहु छमामंदिर दोउ भ्राता॥
(बाल० २८५। ३)

४३. विरक्तिके लिये

भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं।
सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति॥
(अयोध्या० ३२६)

४४. ज्ञानकी प्राप्तिके लिये

छिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा॥
(किष्किन्धा० ११। २)

४५. भक्तिकी प्राप्तिके लिये

भगत कल्पतरु प्रनत हित कृपा सिंधु सुख धाम।
सोइ निज भगति मोहि प्रभु देहु दया करि राम॥
(उत्तर० ८४ ख)

४६. हनुमान्‌जीको प्रसन्न करनेके लिये

सुमिरि पवनसुत पावन नामू।
अपने बस करि राखे रामू॥
(बाल० २६। ३)

४७. मोक्ष-प्राप्तिके लिये

सत्यसंध छाँड़े सर लच्छा।
कालसर्प जनु चले सपच्छा॥
(लंका० ६८। २)

४८. सीतारामजीके दर्शनके लिये

नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर स्याम।
लाजहिं तन सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम॥
(बाल० १४६)

४९. जानकीजीके दर्शनके लिये

जनकसुता जग जननि जानकी।
अतिसय प्रिय करुनानिधान की॥
(बाल० १८। ४)

५०. श्रीरामचन्द्रजीको वशमें करनेके लिये

केहरि कटि पट पीत धर सुषमा सील निधान।
देखि भानुकुलभूषनहि बिसरा सखिन्ह अपान॥
(बाल० २३३)

५१. सहज स्वरूप-दर्शनके लिये

भगत बछल प्रभु कृपानिधाना।
बिस्वबास प्रगटे भगवाना॥
(बाल० १४६। ४)

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

मूल रामायण

चौपाई

अब श्रीराम कथा अति पावनि।
सदा सुखद दुख पुंज नसावनि॥
सादर तात सुनावहु मोही।
बार बार बिनवउँ प्रभु तोही॥
सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता।
सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता॥
भयउ तासु मन परम उछाहा।
लाग कहै रघुपति गुन गाहा॥
प्रथमहिं अति अनुराग भवानी।
रामचरित सर कहेसि बखानी॥
पुनि नारद कर मोह अपारा।
कहेसि बहुरि रावन अवतारा॥
प्रभु अवतार कथा पुनि गाई।
तब सिसु चरित कहेसि मन लाई॥

दोहा

बालचरित कहि बिबिधि बिधि मन महँ परम उछाह।
रिषि आगवन कहेसि पुनि श्रीरघुबीर बिबाह॥

चौपाई

बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा।
पुनि नृप बचन राज रस भंगा॥
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा।
कहेसि राम लछिमन संबादा॥
बिपिन गवन केवट अनुरागा।
सुरसरि उतरि निवास प्रयागा॥
बालमीक प्रभु मिलन बखाना।
चित्रकूट जिमि बसे भगवाना॥
सचिवागवन नगर नृप मरना।
भरतागवन प्रेम बहु बरना॥
करि नृप क्रिया संग पुरबासी।
भरत गए जहँ प्रभु सुख रासी॥
पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाए।
लै पादुका अवधपुर आए॥
भरत रहनि सुरपति सुत करनी।
प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी॥

दोहा

कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजी सरभंग।
बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभु अगस्ति सतसंग॥

चौपाई

कहि दंडक बन पावनताई।
गीध मइत्री पुनि तेहिं गाई॥
पुनि प्रभु पंचबटीं कृत बासा।
भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा॥
पुनि लछिमन उपदेस अनूपा।
सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा॥
खर दूषन बध बहुरि बखाना।
जिमि सब मरमु दसानन जाना॥
दसकंधर मारीच बतकही।
जेहि बिधि भई सो सब तेहिं कही॥
पुनि माया सीता कर हरना।
श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना॥
पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्ही।
बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही॥
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा।
जेहि बिधि गए सरोबर तीरा॥

दोहा

प्रभु नारद संबाद कहि मारुति मिलन प्रसंग।
पुनि सुग्रीव मिताई बालि प्रान कर भंग॥
कपिहि तिलक करि प्रभु कृत सैल प्रबरषन बास।
बरनन बर्षा सरद अरु राम रोष कपि त्रास॥

चौपाई

जेहि बिधि कपिपति कीस पठाए।
सीता खोज सकल दिसि धाए॥
बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँती।
कपिन्ह बहोरि मिला संपाती॥
सुनि सब कथा समीरकुमारा।
नाघत भयउ पयोधि अपारा॥
लंकाँ कपि प्रबेस जिमि कीन्हा।
पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा॥
बन उजारि रावनहि प्रबोधी।
पुर दहि नाघेउ बहुरि पयोधी॥
आए कपि सब जहँ रघुराई।

बैदेही की कुसल सुनाई॥
सेन समेति जथा रघुबीरा।
उतरे जाइ बारिनिधि तीरा॥
मिला बिभीषन जेहि बिधि आई।
सागर निग्रह कथा सुनाई॥

दोहा

सेतु बाँधि कपि सेन जिमि उतरी सागर पार।
गयउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार॥
निसिचर कीस लराई बरनिसि बिबिध प्रकार।
कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संघार॥

चौपाई

निसिचर निकर मरन बिधि नाना।
रघुपति रावन समर बखाना॥
रावन बध मंदोदरि सोका।
राज बिभीषन देव असोका॥
सीता रघुपति मिलन बहोरी।
सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी॥
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता।
अवध चले प्रभु कृपा निकेता॥
जेहि बिधि राम नगर निज आए।
बायस बिसद चरित सब गाए॥
कहेसि बहोरि राम अभिषेका।
पुर बरनत नृपनीति अनेका॥
कथा समस्त भुसुंड बखानी।
जो मैं तुम्ह सन कही भवानी॥
सुनि सब राम कथा खगनाहा।
कहत बचन मन परम उछाहा॥

दोहा

गयउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक॥

(उत्तरकाण्ड ६४ से ६८)

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

श्रीरामराज्याभिषेक

दोहा

तब मुनि कहेउ सुमंत्र सन सुनत चलेउ हरषाइ।
रथ अनेक बहु बाजि गज तुरत सँवारे जाइ॥
जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मंगल द्रब्य मगाइ।
हरष समेत बसिष्ट पद पुनि सिरु नायउ आइ॥

चौपाई

अवधपुरी अति रुचिर बनाई।
देवन्ह सुमन बृष्टि झरि लाई॥
राम कहा सेवकन्ह बुलाई।
प्रथम सखन्ह अन्हवावहु जाई॥
सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए।
सुग्रीवादि तुरत अन्हवाए॥
पुनि करुनानिधि भरतु हँकारे।
निज कर राम जटा निरुआरे॥
अन्हवाए प्रभु तीनिउ भाई।
भगत बछल कृपाल रघुराई॥
भरत भाग्य प्रभु कोमलताई।
सेष कोटि सत सकहिं न गाई॥
पुनि निज जटा राम बिबराए।
गुर अनुसासन मागि नहाए॥
करि मज्जन प्रभु भूषन साजे।
अंग अनंग देखि सत लाजे॥

दोहा

सासुन्ह सादर जानकिहि मज्जन तुरत कराइ।
दिब्य बसन बर भूषन अँग अँग सजे बनाइ॥
राम बाम दिसि सोभति रमा रूप गुन खानि।
देखि मातु सब हरषीं जन्म सुफल निज जानि॥
सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृंद।
चढ़ि बिमान आए सब सुर देखन सुखकंद॥

चौपाई

प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा।
तुरत दिब्य सिंघासन मागा॥
रबि सम तेज सो बरनि न जाई।
बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई॥

जनकसुता समेत रघुराई।
पेखि प्रहरषे मुनि समुदाई॥
बेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे।
नभ सुर मुनि जय जयति पुकारे॥
प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा॥
सुत बिलोकि हरषीं महतारी।
बार बार आरती उतारी॥
बिप्रन्ह दान बिबिधि बिधि दीन्हे।
जाचक सकल अजाचक कीन्हे॥
सिंघासन पर त्रिभुअन साईं।
देखि सुरन्ह दुंदुभीं बजाईं॥

छन्द

नभ दुंदुभीं बाजहिं बिपुल गंधर्ब किंनर गावहीं।
नाचहिं अपछरा बृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं॥
भरतादि अनुज बिभीषनांगद हनुमदादि समेत ते।
गहें छत्र चामर ब्यजन धनु असि चर्म सक्ति बिराजते॥
श्री सहित दिनकर बंस भूषन काम बहु छबि सोहई।
नव अंबुधर बर गात अंबर पीत सुर मन मोहई॥
मुकुटांगदादि बिचित्र भूषन अंग अंगन्हि प्रति सजे।
अंभोज नयन बिसाल उर भुज धन्य नर निरखंति जे॥

दोहा

वह सोभा समाज सुख कहत न बनइ खगेस।
बरनहिं सारद सेष श्रुति सो रस जान महेस॥
भिन्न भिन्न अस्तुति करि गए सुर निज निज धाम।
बंदी बेष बेद तब आए जहँ श्रीराम॥
प्रभु सर्बग्य कीन्ह अति आदर कृपानिधान।
लखेउ न काहूँ मरम कछु लगे करन गुन गान॥

छन्द

जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने।
दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजबल हने॥
अवतार नर संसार भार बिभंजि दारुन दुख दहे।
जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे॥
तव बिषम माया बस सुरासुर नाग नर अग जग हरे।
भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुननि भरे॥
जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिधि दुख ते निर्बहे।
भव खेद छेदन दच्छ हम कहुँ रच्छ राम नमामहे॥

जे ग्यान मान बिमत्त तव भव हरनि भक्ति न आदरी।
ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी॥
बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे।
जपि नाम तव बिनु श्रम तरहिं भव नाथ सो समरामहे॥
जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी।
नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी॥
ध्वज कुलिस अंकुस कंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे।
पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे॥
अब्यक्तमूलमनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने।
षट कंध साखा पंच बीस अनेक पर्न सुमन घने॥
फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आश्रित रहे।
पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे॥
जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं।
ते कहहुँ जानहुँ नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं॥
करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव यह बर मागहीं।
मन बचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं॥

दोहा

सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्हि उदार।
अंतर्धान भए पुनि गए ब्रह्म आगार॥
बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर।
बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥

छन्द

जय राम रमारमनं समनं।
भवताप भयाकुल पाहि जनं॥
अवधेस सुरेस रमेस बिभो।
सरनागत मागत पाहि प्रभो॥
दससीस बिनासन बीस भुजा।
कृत दूरि महा महि भूरि रुजा॥
रजनीचर बृंद पतंग रहे।
सर पावक तेज प्रचंड दहे॥
महि मंडल मंडन चारुतरं।
धृत सायक चाप निषंग बरं॥
मद मोह महा ममता रजनी।
तम पुंज दिवाकर तेज अनी॥
मनजात किरात निपात किए।
मृग लोग कुभोग सरेन हिए॥
हति नाथ अनाथनि पाहि हरे।

बिषया बन पावँर भूलि परे॥
बहु रोग बियोगन्हि लोग हए।
भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥
भव सिंधु अगाध परे नर ते।
पद पंकज प्रेम न जे करते॥
अति दीन मलीन दुखी नितहीं।
जिन्ह कें पद पंकज प्रीति नहीं॥
अवलंब भवंत कथा जिन्ह कें।
प्रिय संत अनंत सदा तिन्ह कें॥
नहिं राग न लोभ न मान मदा।
तिन्ह कें सम बैभव वा बिपदा॥
एहि ते तव सेवक होत मुदा।
मुनि त्यागत जोग भरोस सदा॥
करि प्रेम निरंतर नेम लिएँ।
पद पंकज सेवत सुद्ध हिएँ॥
सम मानि निरादर आदरही।
सब संत सुखी बिचरंति मही॥
मुनि मानस पंकज भृंग भजे।
रघुबीर महा रनधीर अजे॥
तव नाम जपामि नमामि हरी।
भव रोग महागद मान अरी॥
गुन सील कृपा परमायतनं।
प्रनमामि निरंतर श्रीरमनं॥
रघुनंद निकंदय द्वंद्वघनं।
महिपाल बिलोकय दीनजनं॥

दोहा

बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग।
पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥

(उत्तरकाण्ड १० से १४)

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

गीताके नित्य पठनीय पाँच श्लोक

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥
यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥
जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥
वीतरागभयक्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥

===::0::===